तारतम मंजरी

वर्ष २, अंक ४, अगस्त २०१६, पृष्ठ २८

ब्रह्म ज्ञान ही अमृत है

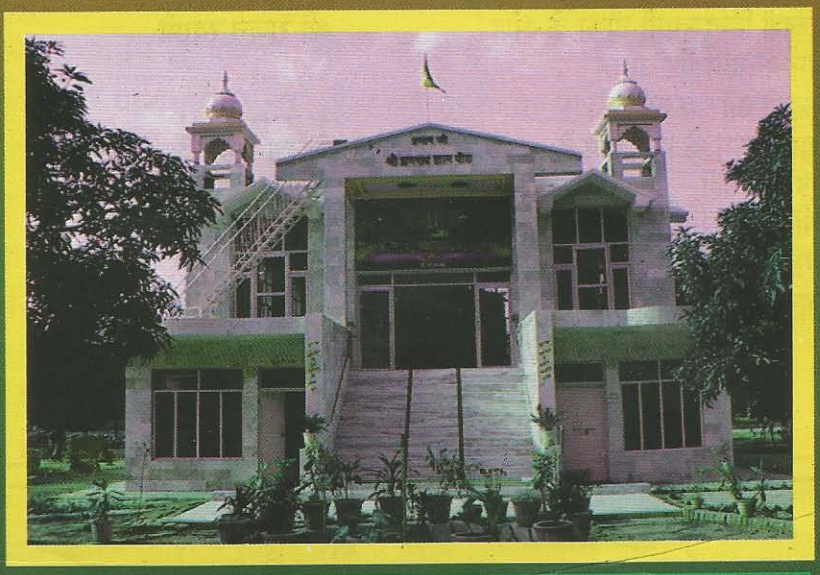

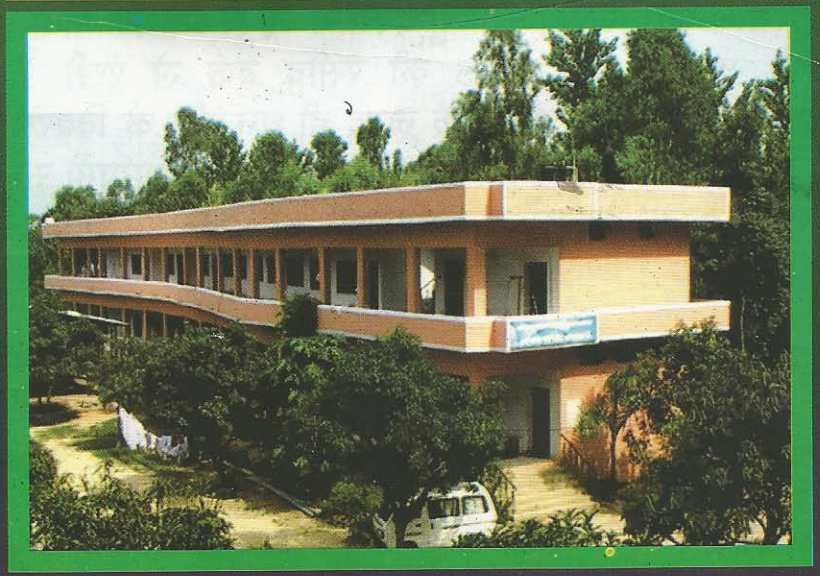

प्रेम ही जीवन है

स्वत्वाधिकारी :

श्री प्राणनाथ ज्ञान पीठ

नकुड़ रोड, सरसावा, जिला-सहारनपुर, उ.प्र.

फोन नं. : ०१३३१.२४६०००, ८६५०८५१०१०

ई-मेल : shriprannathgyanpeeth@gmail.com. web : spjin.org

अनुक्रमणिका

इस अंक में.....

०१. सम्पादकीय	अमरलाल सेठी	०१
०२. कलश हिन्दुस्तानी टीका के अंश	श्री राजन स्वामी	०४
०३. धर्म के नाम पर अधर्म	.....	०७
०४. कहनी और करनी	.....	१०
०५. ताथे हुकम के सिर दोष दे	कान्ता भगत	१५
०६. यह मेरा नहीं	बृजेश, ज्ञानपीठ	२०
०७. श्री बीतक साहेब प्रश्न (मॉडल पेपर)	.....	२२
०८. स्मारिका २०१६ के सम्बन्ध में सूचना	.....	२६
०९. ज्ञानपीठ समाचार	.....	२७

आवश्यक सूचनायें

प्यारे सुन्दरसाथ जी! जिस किसी सुन्दरसाथ जी ने आर्थिक सेवा एकत्र करने हेतु पिछले सत्र या सन् 2015 की रसीद बुक ले रखी हैं कृपया वे अपनी–अपनी सत्र की रसीद बुक जल्द ही धनराशि के विवरण सहित श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ में जमा करवाने का कष्ट करें तथा आगामी सन् 2016 की कोई भी रसीद काटने हेतु नये सत्र की रसीद बुक ज्ञानपीठ से पुनः प्राप्त करें।

प्रणाम जी

प्रकाशक :–
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट,
नकुड़ रोड, सरसावा
जिला–सहारनपुर, उत्तर प्रदेश
फोन – 01331 246000, 246871
वेबसाईट :– www.spjin.org
ई मेल :– shriprannathgyanpeeth@gmail.com

सदस्यता शुल्क

भारत में	विदेश में
वार्षिक 110 रू.	.....
आजीवन 1000 रू.	.....

लेख में प्रगट किये गये विचार लेखक के व्यक्तिगत विचार हैं इनके प्रति सम्पादक, प्रकाशक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्यायक्षेत्र सहारनपुर होगा।

सम्पादकीय

आज के व्यस्त जीवन में, जीवन की आपाधापी में किसी के पास समय नहीं है, न ही अपने लिए और न ही अपनों के लिए। यदि किसी के पास कुछ कहने को है, लेकिन उसे सुनने के लिए भी कोई तैयार नहीं। कितनी विडम्बना है ?हर व्यक्ति ए.टी.एम. मशीन बनना चाहता है अर्थात् जब चाहे नोट निकालते रहें, इस पर भी पल भर का सकून नहीं है। इन्टरनेट के युग में समस्याएँ ही समस्याएँ हैं, उन्हें चाहे डाउनलोड करो या अपलोड करो, समाधान तो गूगल के पास भी नहीं है, जहाँ हर समस्या का Instant Solution (इन्स्टैंट सोल्यूशन) क्लिक करने से मिल जाए, ताकि तनाव और नकारात्मकता के मन के Software (सॉफ्टवेयर) से मिटाया जा सके। इन सभी तनावों का मूल कारण है हमारी अपेक्षाएँ!!!

यह सत्य है कि अपेक्षाएँ सामान्य और स्वाभाविक होती हैं, और यह भी सत्य है कि अपेक्षाएँ कैसी भी क्यों न हों, सभी दुःखदायी होती हैं। अपेक्षाओं का अर्थ यह हुआ कि कोई भी काम या परिस्थितियां ऐसी होनी चाहिए, जो हमारी इच्छानुकूल हों, पर यह कभी हुआ नहीं, कि हमारा जीवन हमारी सभी प्राथमिकताओं की अनुकूलता को पूरा करें। इसलिए जीवन में निराशा, कुण्ठा और रिश्तों में कड़वाहट ही हमारे हाथ लगती हैं। परिश्रम तो बहुत किया, पर परिणाम अच्छा नहीं निकला, मनपसंद की नौकरी नहीं मिली, मनपसंद की बीवी नहीं मिली या किसी से सम्बन्ध जोड़ा और उससे मोहभंग होना पड़ा, बताओ ऐसी स्थिति कैसी लगती है ?हम अपने बच्चों से सम्मान और सेवा की अपेक्षा रखतें हैं, लेकिन जब हकीकत सामने आती है तो केवल भुग्तभोगी का मन ही जानता है।

Shakespear Said, “I always feel happy, you know why ? Because I don’t expect anything from any one. EXPECTATIONS ALWAYS HURT.

हम सभी की सोच शेक्स्पीअर की तरह तो है नहीं, आप ही बताइए, क्या ऐसी स्थिति में कोई आश्चर्य नहीं कि हम अवसाद, कुंठा और असंतुष्टि का जीवन जीते हैं। हमारा अतीत पश्चातापों और भविष्य की चिन्ताओं से भरा और घिरा रहता है। इन सभी बातों का अर्थ यह भी हो सकता है कि हम अपनी खुशी के लिए दूसरों की कृपादृष्टि तथा उनके रहम–ओ–करम पर निर्भर हैं। जब हमारी निर्भरता दूसरों के आधीन होती हैं, तो झुंझलाहट, कुंठा, क्रोध, ईर्ष्या और अन्य प्रकार के तनाव तो बिना बुलाए आमन्त्रित होंगे ही। सो अन्य लोगों पर की गई अपेक्षाएँ दम घोंटू होती हैं। हम कई बार परिस्थितियों को दोष देकर अपने जीवन के आनन्द से वंचित हो जाते हैं।

हमारी कामना सदैव यही रहती है कि सभी अपेक्षाओं के परिणाम हमारे पक्ष में हों, चाहे वे कितने भी असम्भव या अविश्वसनीय क्यों न हों ?ये इच्छाओं का जाल अन्तहीन अपेक्षाओं को जन्म देता चला जाता है, जिसका कोई अन्त नहीं होता। सच है आदमी बूढ़ा हो जाता है पर उसकी ये इच्छाएँ सुरसा की तरह मुँह खोले बढ़ती रहती हैं। कितने आश्चर्य की बात है कि हमने आप को प्रसन्न रखने, प्रेम की स्वीकृति पाने की अपेक्षा दूसरों पर रखते हैं। देखें तो हम भी किसी से कम नहीं, बिरला, टाटा, अम्बानी जितने हमीर, करीना, कैटरीना जैसे Zero figure (दुबले–पतले) और विश्वनाथ आनन्द की तरह आकर्षित और स्मार्ट बनना चाहते हैं।

हमारे जीवन में दूसरों और परमात्मा के प्रति शिकायतों के पुल्लन्दे के सिवा और रखा ही क्या है ?जीवन में जितनी अधिक अपेक्षाएँ, उतनी द्वन्द्वभी उतनी प्रबलता को पकड़ते हुए बढ़ते चले जाएंगे। हम अपेक्षाएँ करते हैं कि लोग भी हमारी तरह अनुभव करें, सोचें और क्रिया करें। How is it Possible ? Two men are not alike. प्रत्येक व्यक्ति विशिष्ट है, हर एक की सोच अलग है, उसका अनुभव हम से अलग हो सकता है, उसका क्रियान्वित रूप भी अलग होगा।

दूसरों से की जाने वाली अपेक्षाओं से कैसे छुटकारा पाया जा सकता है ?बात बड़ी सरल है, दूसरों से किसी भी प्रकार की अपेक्षा रखना छोड़ दो। जो है उसको स्वीकार करो। हमारे सभी अध्यात्मिक गुरू हमें हर रोज अपने उपदेश में यही कहते हैं कि इन अपेक्षाओं से मुक्त होइए। सम्भवतया इन्होंने

अपने मन के माध्यम से इन अपेक्षाओं पर विजय प्राप्त की है। हमें भी उनके इस ज्ञान पथ का अनुशरण करना चाहिए। यथास्थिति को स्वीकार करो। सुखी रहने का सबसे बढ़िया सिद्धान्त है। जिन दिन परिणामों के प्रति हमारा मोह भंग हो जायेगा, हम अपेक्षाओं के चंगुल से मुक्त हो जाएंगे। परिणामों की चिन्ता न करने का महत्व गीता से बढ़कर और कोई नहीं दे सकता। युद्ध के परिणामों को लेकर आशंकित अर्जुन के चित्त की अस्थिरता को देखते हुए श्री कृष्ण ने उन्हें कहा था– कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन 'कर्म करो फल की चिन्ता न करो।' जो लोग फल की इच्छा से कर्म करते हैं, वे जो भी काम करते हैं, उसके फल की चिन्ता से निरन्तर ग्रस्त रहते हैं।

जो लोग अपनी चेतनता का (आत्म से परआत्म) एकीकृत कर अपने सभी गुण–अंग इन्द्रियों को श्री राज जी के चरणों में बिना किसी अपेक्षा (इच्छा, शर्त) के समर्पित कर उसकी चितवनि में डूब जाते हैं, उनकी सभी व्यर्थ की चिन्ताओं से पीछा छूट जाता है और परिणाम सदैव सकारात्मक होते हैं।

अपेक्षाओं से छुटकारा पा लेने के बाद आपकी दुनियां ही बदल जाती है, न उसमें द्वन्द्व, न कोई समस्या, न कोई मन में उलझन, चाहे अमीरी मिले या गरीबी, खुशी मिले या ग़म, स्वस्थ रहें या अस्वस्थ्य, यश मिले या अपयश, हम उसमें आनन्दित होते हैं, तब हमारी सोच यही कहती है– ' हम राज़ी हैं उसी में, जिसमें तेरी रज़ा है'। अपेक्षाओं से पीछा छुड़ाने पर हम न केवल यथार्थता के रू–ब–रू होते हैं, बल्कि शान्ति, आनन्द, प्रेम और अनुरूपता को प्राप्त करते हैं।

प्राणाधार सुन्दरसाथ जी! अपेक्षाओं से निजात (छुटकारा) पाने का एक ही तरीका है कि हम अध्यात्मिक पथ का अनुसरण करें। जो कुछ हुआ, और जो कुछ होगा, वह हमारे भले के लिए ही होगा।

जिस विध राखे धनी, तिस विध रहिए।

Don't Expect any thing from others. Be self dependent.

करूं बल बहियां आपनी, छांड बिरानी आस।

जाके आंगन है नदी, सो कस भरे प्यास।।

प्रणाम जी
अमरलाल सेठी,
अबोहर
09463233945

कलश हिन्दुस्तानी टीका के अंश

टीका कर्ता - श्री राजन स्वामी

विरह के प्रकरण–राग देसांकी

तलफे तारूनी रे, दुलही को दिल दे।

सनमंध मूल जानके रे, सेज सुरंगी पर ले।।१।।

श्री महामति जी की आत्मा कहती है कि मेरे प्राणेश्वर! आप को अपना हृदय सौंपकर आपके प्रेम भरे दर्शन के लिये मैं तड़प रही हूँ। परम धाम के मूल सम्बन्ध से अपने हृदय की सुन्दर शैय्या पर आपके विराजमान होने की मैं प्रतीक्षा कर रही हूँ।

विशेष– उपरोक्त चौपाई में 'दुलही' के स्थान पर यदि 'दुल्हे' हो तो अधिक उपयुक्त होगा, क्योंकि तारूणी (तरूणी) और दुल्हिन शब्द एकार्थवाची हैं। हृदय की वह शैय्या है जिस पर प्रियतम अपनी प्रियतमा को प्रेम का उपहार देता है।

सब तन विरहे खाइया, गल गया लोहू मांस।

न आवे अंदर बाहेर, या विध सूकत स्वांस।।२।।

आपके विरह ने मेरे इस सम्पूर्ण शरीर को ही जर्जर कर दिया है। विरह की अग्नि ने मेरे रक्त एवं मांस को सुखा दिया है। श्वांस की भी ऐसी अवस्था हो गयी है कि न तो वह सरलता पूर्वक बाहेर से अंदर आ रही है और न अन्दर से बाहर निकल पा रही है।

हाड हुए सब लकड़ी, सिर श्रीफल विरह अगिन।

मांस मीज लोहू रंगा, या विध होत हवन।।३।।

विरह की अग्नि ने मेरी अस्थिओं को सुखाकर लकड़ी के समान कर दिया है। मेरा सिर भी अब सूखे नारियल की भांति दृष्टिगोचर हो रहा है। विरह की अग्नि में मेरे शरीर का मांस, मज्जा और नाड़ियों (नसों) में बहता हुआ रक्त यज्ञ की आहुति के समान जल रहा है।

रोम रोम सूली सुगम, खंड खंड खांडा धार।

पूछ पिया दुख तिनको, जो तेरी विरहिन नार।।४।।

मेरे प्राणेश्वर! आपके विरह में ऐसा लग रहा है कि जैसे मेरे शरीर के रोम–रोम मे बर्छियां चुभ रही हैं तथा तलवार से मेरे शरीर को टुकड़े–टुकड़े किये जा रहे हैं। आप तो मेरे सर्वस्व हैं। कृपा करके इतना तो पूछ लीजिए कि आपके विरह में मुझ अर्धांगिनी की क्या स्थिति है?

ए दरद जाने सोई, जिन लगे कलेजे घाव।

ना दारू इन दरद का,फेर फेर करे फैलाव।।५।।

विरह की मेरी पीड़ा का अनुभव मात्र उसी को हो सकता है जिसके हृदय में स्वयं विरह की चोट लगी हो। विरह की इस पीड़ा को समाप्त करने की कोई दवा नहीं होती। यह तो नित्य–निरन्तर बढ़ती ही रहती है।

ए दरद तेरा कठिन, भूखन लगे ज्यों दाग।

हेम हीरा सेज पसमी, अंग लगावे आग।।६।।

आप के विरह की पीड़ा असह्य है। इस अवस्था में सुन्दर आभूषण भी शरीर को जला देने वाले प्रतीत होते हैं तथा सोने और हीरे से जड़ी हुई मखमली शैय्या भी स्पर्श मात्र से शरीर को अग्नि के समान जला देने वाली लगती है।

विरहिन होवे पिउ की, वाको कोई ना उपाए।

अंग अपने वैरी हुए, सब तन लियो है खाए।।७।।जिसे अपने प्रियत्म के विरह में तड़पने का रोग लग जाता है उसे उसकी पीड़ा से मुक्त होने का कोई उपाय नहीं सूझता है। उसे अपने ही शरीर के अंग शत्रु के समान कष्टकारी प्रतीत होते हैं। वस्तुतः उसके शरीर को विरह ने निगल लिया होता है।

ए लछन तेरे दरद के, ताए गृह आँगन न सुहाए।

रतन जड़ित जो मंदिर, सो उठ उठ खाने धाए।।८।।

प्राणवल्लभ! आपके विरह की पीड़ा से तड़पने का यही लक्षण है कि अपना घर–आंगन तनिक भी अच्छा ही नहीं लगता। हीरे–मोतियों से बना हुआ अपना निवास भी श्मशान की तरह भयावह लगता है (खाने को दौड़ता है।)

भावार्थ– 'खाने को दौड़ना' एक मुहावरा

है–जिसका अर्थ होता है–'बहुत बुरा लगना'।

ना बैठ सके विरहनी, सोए सके ना रोए।

राजप्रथी पाँउ दाब के, निकसी या विध होए।।६।।

प्रियतम के विरह में तड़पने वाली आत्मा न तो शान्ति से बैठ पाती है, न सो सकती है और न खुल कर रो ही सकती है। उसकी ऐसी अवस्था हो जाती है कि वह सम्पूर्ण पृथ्वी के राज्य को भी ठोकर मार कर एकान्तवास के लिये निकल सकती है।

विरहा ना देवे बैठने, उठने भी ना दे।

लोट पोट भी ना कर सके, हूक हूक स्वांस ले।।१०।।

प्रियतम का विरह न तो बैठने देता है और न उठने देता है। इस अवस्था में तो जी भर कर (लोट–पोट कर) रोना भी सम्भव नहीं हो पाता। केवल आहें भरने के अतिरिक्त कोई भी चारा नहीं रह जाता।

आठों जाम विरहनी, स्वांस लिए हूक हूक।

पत्थर काले ढिग हुते, सो भी हुए टूक टूक।।११।।

मेरे प्राण प्रियतम! जब मैं छः मास तक आठों प्रहर (दिन–रात) आपके विरह में गर्म–गर्म सांसे लेती रही अर्थात् हाय प्रियतम! हाय प्रियतम की आहें भरती रही तो आपने प्रत्यक्ष दर्शन दिया। यह दृश्य देखकर जो मेरे साथ बड़े भाई श्यामल जी थे,वे भी मेरे प्रति समर्पित हो गये।

भावार्थ– श्यामल जी को काला पत्थर इसलिये कहा गया है क्योंकि वे मिहिरराज जी के प्रति रूखा व्यवहार करते थे, तथा उनके स्वरूप के सम्बन्ध में भी उन्हें कोई पहचान नहीं थी। उनमें परमधाम का अंकुर भी नहीं था।

एह विध मोहे तुम दई, अपनी अंगना जान।

परदा बीच टालने, ताथें विरहा परवान।।१२।।

हे धाम धनी! इस प्रकार मेरे और आपके मध्य में माया का जो आवरण (पर्दा) था, उसे हटाने के लिये आपने अपनी अर्धांगिनी जानकर मुझे विरह के रस में डुबोया और मेरे धाम हृदय में अपना स्वरूप दिया अर्थात् विराजमान हो गये।

।।प्रकरण।।५।।चौपाई।।१३०।।

धर्म के नाम पर अधर्म

गीता में योगेश्वर श्री कृष्ण ने कहा है

यदा यदा हि धर्मस्य गलानिर्भवति भारतः
अभ्युदान धर्मस्य तदात्मानं सृजम्यहम्

जब भी संसार में धर्म की हानि होती है मैं अवतार लेता हूं। अधर्म के सम्राज्य का अंत करके पुनः धर्म की स्थापाना करता हूँ। चाहे सृष्टि का प्रत्येक सम्प्रदाय इस बात को तो मुक्त कंठ से स्वीकार करता है कि इस संसार में कोई शक्ति तो है जो इसका संचालत करती है। कोई उस शक्ति को महादेव मानकर पूजता है तो कोई उसे चतुर्भुजी विष्णु मानकर उसकी वंदना करता है। शैव और वैष्णवों के अलावा पौरणिक विचारधारा में कई लोगों ने उस शक्ति को एक दैवी के रूप में स्वीकार किया। एक ऐसी देवी जिसकी सैकड़ों भुजाएं है जो सिंह पर सवार है और जो अपने एक वार से अनेक असुरों का वध करती है। पौराणिक मान्यता है कि महिषासुर नाम का एक राक्षस देवताओं को प्रताड़ित करता है इंद्रादि सभी देव के पास जाते है सभी देवता अपनी शक्ति का कुछ अंश देते है और उनसे एक देवी प्रगट होती है जिसका नाम है दुर्गा रखा जाता है जो सैकड़ो भुजाओ वाली है और सिंह पर सवार है अंततोगत्वा वह शक्ति महिषासुर का संघार करती है। लेकिन दुर्गा क्या है? सिंह क्या है? महिषासुर किसका प्रतिक है? महिषासुर अर्थात् जो भैसे पर सवार है। यह भैसा कौन है? जब मन तमोगुणी वृत्तियों पर सवार होता है तो वही महिषसुर कहलाता है। इसी प्रकार 10 इंद्रिया रूपी देवताओं की शाक्ति सतोगुण को प्राप्त होती है तो वो दुर्गा का रूप लेती है। चित्त में उठने वाले अनेक

सुविचार उसकी अंसख्य भुजाए बनते है और दृढ निश्चय रूपी सिंह पर सवार होकर मन की तमोगुणी प्रवृति रूपी महिषासुर का संघार करती है। लेकिन मनुष्य की प्रवृति बहिर्मुखी रही है । उसने अपने मन की सतोगुणी वृतिरूपी दर्गा को भूल कर उसकी मिट्टी को मूर्ति बनाई। उसे मिट्टी के सिंह पर बिठाया और पूजने लगा। बात अगर यही तक भी रहती तो ग्राह्य थी लेकिन हो आश्चर्य तो तब हुआ जब उसने देवी को प्रसन्न करने के लिए मूक पशुओं की बलि देनी शुरू कर दी। एक पौराणिक आख्यान है कि रक्तबीज नाम का एक राक्षस था युद्ध में जहां 2 उसके रक्त की बूंद पड़ती थी एक नया रक्तबीज पैदा हो जाता। देवी ने काली का विकराल रूप धारण किया और उसके रक्त को भी पी लिया। तबसे यह जन श्रुति फैल गई कि काली को प्रसन्न करने के लिए रक्त की भेंट चढ़ानी चाहिए। लेकिन रक्तबीज कौन है काम क्रोध और मोह से ग्रसित मन में उठने वाले सभी विचार रक्त बीज को प्रतिनिर्मित करते है और जब तक इसके संस्कार चित्त में रहेगे नए रक्तबीजों का जन्म होता रहेगा। मानव को चाहिए कि परमात्मा के विरह और प्रेम मे डूब कर उन संस्कारों को भस्म कर डाले लेकिन मानव तो मानव है। तृष्णाओं और कामनाओ के वशीभूत उसकी जिहवा अब मांस के रस को चख चुकी थी। इस स्वाद ने उसे अंध बना दिया राम और कृष्ण की संस्कृति में जहां अहिंसा और प्रेम के पाठ पढ़ाए जाते थे वो उसे कब तक रास आते? उसने अपनी तृष्णा की पूर्ति के लिए धर्म की आड़ में ही ऐसा घिनौना खेल खेला देवी की मूर्ति के सामने खुले आम खून की होली खेलने लगाा उत्तर प्रदेश बिहार पश्चिम बंगाल और नेपाल आदि में नवरात्रों के दिन कितने पशु मौत के घाट उतार दिए जाते है? हाथो में नंगी तलवारे लिए मानव तू जरा ठहर किसी निरपाराध असहाय एवं मूक पशु की गर्दन काटने से पूर्व तू ये तो सोच कि तुम

क्या करने जा रहे हो? तु जिसे जगदंबा कहता है उसकी प्रतिमा के सामने इन निरीह पशुओं की छाया कहता है। जगदंबा कौन है? जो सारे जगत की माता है। क्या वह उस पशु की मां नहीं जिसे तू काटने जा रहा है? इस संसार में ऐसी कौन सी मां है जो अपने पुत्र के रक्त से अपनी पिपासा शांत करती है? पौराणिक ग्रंथो का तू हवाला दे रहा है उन्ही ग्रंथों का कथन है

या देवी सर्वभूतेषु जीवरूपेण संस्थिता।
नमः तस्यै नमः तस्यै नमः तस्यै नमो नमः

अर्थात जो देवी सभी प्राणियो में जीव रूप से स्थित है उसे प्रणाम है। प्रणाम है। प्रणाम है। जो देवी तेरी माता और बहन में है वही देवी उस मूक पशु में भी है जिसे मारने के लिए तू तलवार उठाता है यजुर्वेद के पहले अध्याय के पहले मंत्र में लिखा है

यज्ञमानस्य पशून पाहि– अर्थात हे परमात्मा तू यज्ञमान के पशुओं की रक्षा कर

इमं मा हिंसी द्विपांद पशु– कोई भी मनुष्य उपकारक पशुओं को कभी न मारे

द्विपादव चतुष्पात पाहि दिवो वृष्टिमेरय – हे मनुष्य तू दो पैर वाले और चार पैर वाले प्राणियो की रक्षा कर अनेक ऐसे उदाहरणों से धर्म ग्रंथ भरे पड़े है। एक भी एक भी ऐसा आर्ष ग्रंथ नहीं है जो पशु बलि कि अनुमति देता है। सृष्टि के आरंभ से परमात्मा ने वेदो के माध्यम से आचरण की शिक्षा दी है और वेदादि ग्रंथो ने अहिंसा को धर्म की नीव बताया है फिर कैसे तुमने अहिंसा के पाठ को भुला दिया? किसने तुमको वेद विरूद्ध आचरण के लिए बहका दिया। तूने सोच भी कैसे लिया कि जिस धर्म का पहला सिद्वांत ही अंहिसा है उसे तू हिंसा की लाल चादर से ढक देगा?

अरे देवी देवता तो शाकाहारी होते है। क्या वो तेरा चढ़ाया मास भक्षण करेंगे तेरे द्वारा अर्पित रवत का पान करेगे? तू स्वयं अपनी जिहवा को तृप्ति के लिए देवी देवाताओं को खुश करने के बहाने धर्म को कलंकित कर रहा है। यज्ञ में जब आहुति दी जाती है तो यह देख लिया जाता है कि समिधा के लिए प्रयुक्त लकड़ी में कहीं चीटी आदि कीड़े मकोड़े तो नहीं है। जहां एक चीटी की भी हत्या निषेध है वहं तू इन धर्म ग्रंथो का अनादर करने क्यों अपनी माता को भी मांसाहारी बनाकर कलंकित करना चाहता है। वैदिक परंपरा में जिन पंच महायज्ञों का विधान आया है उसमें से एक बलिवैश्वदेव यज्ञ है। बालिवैशवदेव यज्ञ का अर्थ है कि गृहस्थ को भोजन करने से पूर्व पशु–पक्षियो को अनिवार्य रूप से कुछ भोज्य–पदार्थ खिलाया जाए। लेकिन आज का मानव तो खिलाने के बजाए उन्हे ही मार कर खा जाना चाहता है यह कैसा धर्म है?निश्चित रूप से यह आसुरी मार्ग ही कहा जाएगा।

प्रणाम जी

कहनी और करनी

मैं पेहेले केहेनी कही, किया काम दुनी का सब।

पर एक फैल रहेनीय का, लिया न सिर पर तब।।

अब आया बख्त रेहेनीय का, रात मिट हुई फजर।

अब केहेनी रेहेनी हुआ चाहे, छोड़ दुनी ले अर्स नजर।। खिल्वत ५/३, ४

श्री मुखवाणी में पहले तो वह ज्ञान दिया गया जो अज्ञानता के अन्धकार को सूर्य के समान मिटाकर प्रकाश में लाकर खड़ा करने का कार्य किया। यह कहनी थी। इस अखण्ड के ज्ञान ने ही दुनियां के सभी कार्यों को पूरा कर दिया। अब सब कुछ प्रकाशित हो जाने के उपरान्त रात्रि को समेटकर प्रातः काल हो गया है और यह रहने का वक्त आ गया है। संसार को छोड़कर दृष्टि में अखण्ड परमधाम को रखकर अब कहनी को रहनी में परिवर्तित करने का समय गया है।

केहेनी कही सब रात में, आया फैल हाल का रोज।

हक अर्स नजर में लेय के, उड़ाए देओ दुनी बोझ।।

दुनियां केहेनी कहत हैं, सो डूबत मैं सागर।

मैं लेहेरें मेर समान में, कोई निकल न पावे बका घर।। खिलवत ५/५, ७

दुनिया का अपना बोझ है। इस बोझ से दबे रहने पर तो रहनी की जागृति की दशा नहीं आ सकती। अतः केवल अखण्ड परमधाम पर ही दृष्टि गड़ाकर दुनिया का बोझ उतारना होगा और तब वास्तविक रहनी आएगी। अन्यथा कहते–कहते तो पूरा संसार मोह और अहम् के अगाध समुद्र में डूब रहा है। इसमें मैं (अहम् भाव) की मेरू पर्वत के समान ऐसी लहरें उठ रही हैं, जिनमें से

निकलकर अखण्ड घर (परमधाम) की तरफ जाने की कोई सोच नहीं सकता।

नाम तो लौकिक व्यवहार के लिए आवश्यक है। 'कृष्ण' नाम था जिसके लिए विभिन्न विधाएं अर्थात् शक्ति, भक्ति और प्रेम के रास्ते अपनाये गए। यह सर्वविदित है कि मित्रता का प्रेम स्वार्थमूलक नहीं होता। सुदामा ने कृष्ण जैसे मित्र को खोकर सांसारिक धन की प्राप्ति की। स्वार्थ और मित्रता साथ–साथ कैसे रह सकते हैं ?

श्री प्राणनाथ जी ने अपेक्षाएं की ब्रह्मसृष्टियों से और वह भी यह कि 'मैं' अथवा 'अहम्' भाव की कुर्बानी (परित्याग) करें। ऐसा करने से ही वतन (परमधाम) के रहने वाले यार अखण्ड परमधाम की बातें कर सकेंगे और अखण्ड परमधाम जो उनका मूल घर है, में उनकी परात्म जागृत हो सकेगी।

श्री महामति कहें ये मोमिनो, सुनो मेरी वतनी यार।
खसम करावे कुर्बानियां, आओ मैं मारे की लार।।

नाम लौकिक व्यवहार में आवश्यक है। नाम ही पहचान कारण बनता है। नाम, इसका स्मरण, इसका जप अर्थात् बारम्बार दोहराना नामधारी को आकर्षित करता है और उस नाम वाला अपनी शक्ति के अनुरूप अभीप्सित फल भी देता है। श्रीकृष्ण एक नाम है। यह योगमाया बह्माण्ड का तत्व भी। योगमाया ब्रह्माण्ड का क्षरण अथवा नाश से कोई मतलब नहीं। यह शाश्वत एवं अखण्ड है। स्वाभाविक है कि श्रीकृष्ण नाम अथवा तत्व के स्मरण से नरक से त्राण मिल जाता है। परन्तु यह केवल दुनियां के लिए है। दुनिया का तात्पर्य जीवसृष्टि से है। इसके लिए तो एक बार श्री कृष्ण को प्रणाम कर लेना ही ग्रन्थों में पुनर्जन्म से फुर्सत पा लेने

का मार्ग बताया गया है। ईश्वरी सृष्टि के लिए तारतम की ज्योति के माध्यम से अक्षर ब्रह्म एवं पूर्णब्रह्म की जानकारी होगी। अक्षर समष्टि की सुरतायें अथवा ईश्वरी सृष्टियां पूर्ण ब्रह्म को ईश्वरी अथवा परमात्मा के रूप में समझेंगी, परन्तु ब्रह्मसृष्टि अपनी धनी अथवा प्राणपति के रूप में पहचानेंगी। इस पहचान का माध्यम बनेगा तारतम, जो अन्धकार का विनाश कर उसे पूर्ण ब्रह्म की पहचान करायेगा, जो अभी तक अज्ञात था।

श्री प्राणनाथ नाम नहीं है, क्योंकि नाम तो एक दूसरे के भेद को समझने के लिए होता है। जहां द्वैत नहीं है, वहां नाम की आवश्यकता ही क्यों पड़ेगी ?नाम लौकिक व्यवहार के लिए है। लोक अथवा ब्रह्माण्ड में आने पर कोई नाम तो रखना ही पड़ेगा। सूर्य की सतह पर वस्तुतः न तो प्रकाश है और न अन्धकार। परन्तु जब उस पर हम मृत्यु लोक में अपनी बुद्धि से विचार करते हैं, तो उसे प्रकाश की संज्ञा दे देते हैं। सूर्य की सतह पर रहने वाला यदि कोई प्राणी हमारी बातों को समझ सकता, तो हम उससे पूछते कि वहां उजाला है या अन्धेरा ? तो शायद वह निरुत्तर ही रहता, क्योंकि उसने न अन्धेरा देखा और न ही उजाला जाना। यही कारण है कि पूर्ण ब्रह्म की समस्त शक्ति (समझने के लिये इसका प्रयोग किया जा रहा है) के अवतरण पर लौकिक नाम श्रीकृष्ण, मुहम्मद तथा श्री देवचन्द्र जी रखा गया था, परन्तु उन लौकिक नामों को मिटाकर श्री प्राणनाथ नाम रखा गया, जो वस्तुतः प्राणवल्लभ ही नहीं, प्राणों के आधार भी हैं। विभिन्न नाम तो केवल पोशाक हैं, जो शरीर के लिए आवश्यक हैं।

ब्रह्मसृष्टि की रहनी में यह आवश्यक है कि गुह्य भेदों की पहचान हो जाय और तदोपरान्त अहन्ता, ममता का पूर्ण परित्याग हो जाय। धन और पद के वह अहंकार जो

व्यक्ति के साथ चलते रहते हैं, उनका सम्पूर्ण परित्याग ही ब्रह्मसृष्टि का ध्येय है। अहंकार के सम्बन्ध में काफी उल्लेख उपलब्ध है।

दंभ का अन्त सदैव अहंकार में होता है और अहंकारी आत्मा सदैव पतित होती है।

—बाइबिल

जन्म से ही सम्पन्न, यौवनपूर्ण, रूपवान और अथाह शक्तिसम्पन्न होना आदि बहुत बड़ी बात हैं। यदि इनमें से किसी एक के कारण भी मनुष्य में अहंकार उत्पन्न होता है तो इन सब चीजों के मेल की क्या आवश्यकता है ?—

कादम्बरी

जिसने अहंकार छोड़ दिया, वह भव सागर तर गया। — योग वासिष्ठ

पत्थर के खंभे के समान जीवन में कभी न झुकने वाला अहंकार आत्मा को नर की ओर ले जाता है। महावीर स्वामी

धनी को अपने धन का मद रहता है, घमंड रहता है, परन्तु गरीब के झोपड़े में क्रोध और अहंकार के लिए स्थान नहीं रहता। — प्रेमचंद

अहंकारी मनुष्य केवल अपने ही महान कार्यों का वर्णन करता है और दूसरों के केवल कुकर्मों का। — स्पिनोजा

अहंकार का अर्थ का संग्रह करना है, संचय करना है, वह केवल लेता ही रहता है। अहंकार नरक का मूल है। — महाभारत

समस्त महान गल्तियों की तह में अहंकार ही होता है।— रस्किन

जिसे होश होता है, वह कभी घमण्ड (अहंकार) नहीं करता। — शेख शादी

जब कोई किसी के साथ नहीं जाता और सुख तथा दुःख अपने शरीर से भुगतना पड़ता है तो फिर किसी से घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, क्यों ?भौतिक उपलब्धियों के लिए छल, दम्भ, पाखण्ड के सहारे मूल मन को मलिन करने की आवश्यकता क्यों ?क्या शरीर के गुण—अवगुण ही पर्याप्त नहीं हैं ?यहां संसार—यात्रा के लिए इन विरोधी वृत्तियों का हनन इनके विरोधियों के माध्यम से ही हो सकेगा। घृणा को प्रेम से जीतना होगा और अंहकार को सद्प्रयासों में लगाना होगा। धन, जन तथा मानसिक शक्तियों का ऐसा

समायोजन करना होगा जिससे लोगों का कल्याण हो, असहाय सुरक्षित महसूस करें और भयविहीन समाज बन सके। यह ''सदा सुख के दातार'' की शरण में पूर्ण समर्पण करने से ही सम्भव है क्योंकि पूर्णब्रह्म जो ब्रह्मसृष्टि के धनी हैं, सर्वस्व हैं, प्राणपति हैं, वह सांसारिक बन्धन को छुडाते हैं, बांधते नहीं हैं। दुनिया जिस नाम को कायम करने में लगी है, उसे वह मिटाने में लगे हैं। यहां सांसारिक विकार तो अखण्ड घर के शाश्वत् याद में रहने पर स्वतः समाप्त हो जाता है। ब्रह्मसृष्टि से अपेद्वा भी तो यही हैः–

''सुरता एकै राखियो, मूल मिलावा मांहि।''

यह स्पष्ट करना अप्रासंगिक न होगा कि बाह्य शुद्धि की अपेक्षा अन्तः शुद्धि अधिक महत्वपूर्ण है एवं आवश्यक है। बाह्य शुद्धि तो थोड़े प्रयास में नियन्त्रणाधीन हो सकती है परन्तु अन्तःकरण की निर्मलता के लिए घोर संघर्ष करना पड़ता है और इसमें संसार की पाशविक वृत्तियां जो कम शक्तिशाली नहीं हैं, सदैव आड़े आती हैं। अतः सहारे की आवश्यकता होती है सतगुरू की धाम–धनी की।

ब्रह्मसृष्टि यदि रहनी में नहीं आ सकती तो सिर्फ वैचारिक स्तर पर ज्ञान की उपलब्धि किसी काम की नहीं। ज्ञान स्वयं को अहंकारमूलक है। अतः यदि यह ज्ञान पूर्ण समर्पण मूलक न बना, तो वह सांसारिक सृष्टि अथवा जीव सृष्टि की ही रहनी कही जायेगी। निश्चय ही अब कहनी का समय समाप्त हुआ। परात्म के जागरण का समय सन्निकट है। अतः ब्रह्मसृष्टियों को अपनी तमाम विशेषताओं को उजागर करते हुए संसार में अपनी रहनी सुस्पष्ट कर देना है। आशा है हमारी जागनी अभियान तथा धर्म–प्राण विभूतियों के उद्बोधन के सदप्रयास ऐसे परिणाम लायेंगे जो दुनिया के लिए नमूना होगा।

प्रणाम जी

ताथे हुकम के सिर दोष दे

अपने प्रेम के अथाह सागर में डुबोये रखना ही अक्षरातीत का मूल स्वभाव है और स्वभाव को कार्य रुप में परिणित करने की शक्ति का नाम ही इच्छा है। और यह इच्छा कोई साधारण सांसारिक इच्छा नहीं है जो सांसारिक मनोकामनाओं की पूर्ति के लिए मात्र अपना स्वार्थ साधने के लिए की जाती है। क्योंकि अक्षरातीत सर्वशक्तिमान है, पूर्णातिपूर्ण है, इश्क, आनन्द के पूर्ण स्वरुप हैं इसीलिए अपने ही तन तथा अंग आत्माओं को इश्क से सराबोर रखने में ही उनको आनन्द मिलता है। अर्श–अजीम में तो आत्माएं सदैव राजजी के इश्क में भीगी ही रहती हैं, परन्तु इस बार उनकी इच्छा आत्माओं को अलग प्रकार का आनन्द प्रदान करने की थी। यही कारण था कि उनकी इच्छा 'हुकम' के रुप में इस संसार में आई। परमधाम में न तो इच्छा है और न ही हुकम, क्योंकि जिस आनन्द के धाम में इच्छा उपजने से पहले हो पूरी हो जाती हो, वहां इच्छा उपजने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता और हुकम तो दासत्व की भावना का भी प्रतीक है, जिस दिव्य परमधाम में जहां का कण–कण राजजी का अपना ही स्वरुप हो, वहां पर हुकम किसका और किस पर?

श्री राज जी ने अपनी रुहों को एक अलग प्रकार का खेल दिखलाने के लिए उन्हें अपने अति निकट बिठलाया और फिर उनकी सुरताओं को जीवों के तनों पर उतारा। क्योंकि वास्तविक तन तो रुहों के राजजी के निकट हैं और उनकी सुरताएं इस खेल में जीवों पर, यही कारण है कि रुहों को वाणी में राज जी के 'शाहरग' (प्राणनली) से

भी निकट बताया गया है। रुहों के वास्तविक तन तो राजजी के दिल रुपी पर्दे फरामोशी की अवस्था में यह खेल देख रहे हैं जबकि उनकी सुरताएं जीवों के तनों पर बैठकर यह तिलस्मी खेल देख रहीं हैं। श्री राज जी का हुकम ही रुहों को माया के यह विविध रुप दिखला रहा है और यह हुकम ही उन्हें माया के रंग दिखला कर परमधाम लौटायेगा। यद्यपि हुक्म ने ही रुहों को माया में उलझा रखा है परन्तु हुकम के भीतर रुहों की जो भलाई छिपी है, उसी में ही राज जी के प्यार का रहस्य छिपा है। यह हुकम भी तब तक है, जब तक कि रुहें जागृत नहीं होती। ज्यों–ज्यों इलम से रुहें जागृत होती जायेंगी, अपने असल घर तथा प्रियतम की पहचान से दिल में परमधाम के सुखों की याद आयेगी तो हुकम का दबदबा कम होता जायेगा। जब आत्माओं के द्वारा धारण किये हुए तनों को हुकम की वास्तविक पहचान हेागी, तो हुकम उन्हें अपना हितैषी लगेगा। फरामोशी की अवस्था में रुहें हुकम से खेल में उलझी हुई हैं वरना परआतम के प्रतिबिम्ब होने के नाते से उनका दिल भी पिया का अर्स है। जागृत बुद्ध का ज्ञान आत्माओं के लिए ही इस संसार में आया है, सिन्धी वाणी के माध्यम से आत्माओं ने यह जान ही लिया है कि राज जी और उनके मध्य में न कोई द्वार है न कोई ताला है इसलिए कुंजी की भी कोई आवश्यकता नहीं है कि ताले को खोलना पड़े। यह पहेली भी हुकम ने ही डालकर रुहों को अब इलम में उलझा दिया है। क्योंकि रुहों पर हांसी होनी है इसलिए राजजी तथा रुहों के बीच में यह खेल ही उलझन बना हुआ है, रूहों के जागृत हो जाने के पश्चात् न तो हुकम खेल में होगा और न ही परमधाम में।

रुहों हक अर्स नजरो, हुकम नजर खेल माहे।

अर्स नजीक रुहों को खेल से, इत धोखा जरा नाहें। प्र. 24/11 सिनगार

तो प्यारे सुन्दरसाथ जी! परमधाम में

ब्रह्मसृष्टियों ने माया का खेल दिखलाने के साथ साथ उन से दूर न होने की बात भी की थी तो राज जी ने अपने हुक्म के द्वारा उनकी इस मांग को पूरा किया। रूहों की परआत्म को अपने पास बिठला कर उन की प्रतिबिम्ब स्वरूप आत्मा को खेल तो दिखलाये, साथ ही साथ इलम से अर्स–अजीम के इश्क तथा आनन्द की लज्जत इस प्रकार से दी मानो वे परमधाम में ही बैठकर इश्क तथा आनन्द के अनुभव को महसूस कर रही हैं। अब ज्ञान की दृष्टि से देखो तो परमधाम अति निकट दिखाई देता है परन्तु माया की नजर से देखो तो परमधाम में श्री राज जी मूलमिलावा में अति दूर दिखाई देते हैं। यह सब हांसी के लिए किया गया। श्री राज जी के हुकम के बिना तो उनकी कोई भी सुरता नहीं है परन्तु हुकम परआतम की नजर को आत्मा के नाम से इस संसार में लाया है यही कारण है कि आत्माओं को 'हुकम की सुरता' कहा गया क्योंकि हुकम परआतम की नजर को साथ में लेकर आया है इसीलिए आत्माओं की गरिमा हुकम से बड़ी हो जाती है।

'हक हुकम तो है सबमें, बिना हुकम कोई नाहें।

पर यामें हुकम नजर लिये, और रुह का बड़ा मता या माहे।।''

हुकम से परआतम तथा आत्मा दोनों ही फरामोशी में हैं परन्तु फरामोशी जितनी गहरी होगी उतना ही हुकम का प्रभाव उन पर होगा परन्तु फरामोशी से आत्माएं ज्यों–ज्यों जागृत होती जायेंगी हुकम का हिस्सा कम होता जायेगा और आत्मिक बल बढ़ता जायेगा। इस प्रकार आत्मिक शक्ति या हुकम के अस्तित्व का जितना भी हिस्सा जिस तन में होता है उस तन पर उतना ही बल उन दोनों में से एक का चलता है।

जेता हिस्सा तन में जिनका, सो जोरा तेता किया चाहे।

ए विचार करे सो मोमिन, हक हुकम देसी गुहाए।। श्रृंगार 27/48

उपरोक्त चौपाई के माध्यम से यही सिद्ध होता है कि आत्मिक बल की कमी के कारण

ही हम हुकम के ऊपर सारी बात डाल देते हैं। अब जब ब्रह्मज्ञान के प्रकाश में वाणी से सारी बातें स्पष्ट हो गई हैं, वाणी के मंथन के द्वारा ब्रह्मसृष्टियों ने सार के भी सार को पा लिया है तो सारा दोष हुकम के माथे पर डालकर वे तिलस्मी माया के अस्थायी सुखों के जाल में कैसे उलझी रह सकती हैं ?18758 चौपाइयों के माध्यम से हुकम के ही दूसरे रुप इलम ने आत्माओं की आंखे खोल दी हैं तो वे क्यों न अर्स दिल पर पड़े हुए फरामोशी के परदे को हटाने का प्रयास करें। जिन मोमिनों को चितवनी के माध्यम से अपनी आत्मा के दिल का राज जी के प्रेम से रंगने की शोभा मिल चुकी है वे हुकम से नहीं डरेंगी।

ताथे हुकम के सिर दोष दे, बैठ न सके मोमिन।

अर्स दिल खुदी से क्यो डरे, लिये हक इलम रोसन।। श्रृंगार 27/19

अक्सर हम सुन्दरसाथ सारी बात हुक्म पर डालकर स्वयं सगे–सम्बन्धी तथा मित्रों के मोह में लिप्त रहने के गुनाहों से स्वयं को बचा लेते हैं। हम स्वयं गुनाह करें और हुकम को हमारी समस्त बुराईयों के लिए उत्तरदायी ठहराएं तो यह सच नहीं है क्योंकि हमारी आत्मा के साथ जीव भी तो जुड़ा है, जीव के संस्कारों की कालिमा सदैव आत्मा की जागृति में आड़े आती है। परन्तु आत्मा जब प्रेम में डूब जाती है तो पिछले संस्कारों का प्रभाव समाप्त हो जाता है और फिर तो जीव भी आत्मा का सहयोगी बनकर अंगना भाव से प्रियतम को रिझाना आरम्भ कर देता है। आत्मा को तो प्रेम का आहार ही चाहिए, जीव को जब परब्रह्म का ज्ञान प्राप्त हो जाता है तो वह जागृति के पथ पर चलते हुए 'सोहागी जीव' होने की शोभा को पा लेता है। ब्रह्मवाणी से जिन मोमिनों का दिल अर्स हो जाता है वे हुकम की आधीनता को अपनी जागनी के पथ पर आड़े आने वाली रुकावट नहीं समझेंगी। और फिर हुकम तो दासत्व की भावना का भी प्रतीक है तो क्या हम राज जी के दास हैं। हम स्वयं अपने आत्मिक बल का आंकलन ठीक से नहीं कर पा रहे

इसीलिए हुकम रुपी परदा ओढ़कर कायरता का प्रदर्शन कर रहे हैं।

वाणी में तो यह भी कहा गया है कि हुकम रुहों की गरिमा को ठेस पहुँचाने के लिए नही, अपितु उनकी सहायता के लिए आया है। हुकम के बिना तो कोई भी मोमिन नहीं है हुकम सबके लिए है, परन्तु आत्मा की जागनी से पहले हम हुकम को श्री राज जी और अपने बीच में लाकर अपने आलसी पन तथा कायरता का ही प्रदर्शन कर रहे हैं। आत्मजागृति के पश्चात् पूर्ण समर्पण की स्थिति में स्वयं को हुकम पर छोड़ देना ही हुकम के नाम को सार्थक करना है। यदि हम अपनी आदर्श रहनी की कसौटी पर खरे उतरते हैं तो हमारा समर्पण केवल अपने श्री राज जी पर ही होता है, ऐसे में जब दिल अर्स हो जाये तो उसी अर्स दिल से मोमिन के मुख से निकली हुई बात श्री राज जी की ही होगी। ऐसी अवस्था में हुकम आत्मिक तन का ही चलता है वरना हुकम के गुलाम बनकर उसके इशारों पर नाचने की रस्म निभानी पड़ेगी। गुनाह चाहे छोटा हो या बड़ा, दोषी तो बड़ो को ही माना जाता है इसीलिए रुहों को अपने बड़प्पन की मर्यादा को निभाते हुए हुकम पर अपनी निर्भरता छोड़ देनी चाहिए।

आत्म जागृति के अभाव में आत्मओं ने अपने पारिवारिक तथा सामाजिक दायित्वों को ही सर्वोपरि मान लिया है। ब्रह्मवाणी के ज्ञान से यदि हमारी आत्मदृष्टि खुल गई होती तो इस संसार से अपनी आसक्ति को हटाकर हम अपने धनी पर समर्पित होते। वाणी से कहनी को तो हमने अपना लिया है परन्तु रहनी हमारी नगण्य है यही कारण है कि हम सारा दोष हुकम पर डालकर स्वयं को निर्दोष मान लेते हैं। पहले तो हम ज्ञान से अनजान थे इसीलिए हमारे समस्त गुनाह क्षम्य थे परन्तु ज्ञान से जब हमारे जीव का दिल रोशन हो चुका है फिर भी हम हाथ पर हाथ धरकर हुकम के परदे की ओट लेकर चुपचाप बैठे हैं। हमारे यही गुनाह हमें गुन्हेगारों की लाइन में खड़ा करेंगे फिर तो हांसी से हमें कोई बचा नहीं पायेगा।

प्रणाम जी

आपका अपना सुन्दरसाथ

कान्ता भगत

दिल्ली

यह मेरा नहीं

यह मेरा है इस प्रकार कि सोच मनुष्य की आत्मा को कष्ट पहुँचाती है। यदि मनुष्य यह मेरा नहीं है (इदं न मम) ऐसा सोचकर जीवन व्यतीत करे तो जीवन अन्त तक सुखी होता है।

मनुष्य की सोच यह होनी चाहिए कि यह मेरा नहीं है बल्कि उस परब्रह्म के द्वारा हमें प्राप्त हुआ है। आज मनुष्य यह सोचकर जीवन व्यतीत करते रहते हैं कि यह धन मेरा है, इसी कारण मनुष्य दुःखी होते रहते हैं।

सुख और दुःख मनुष्य पर आते रहते हैं लेकिन अन्तर यह है किसी पर कुछ समय बाद और कुछ पर शीघ्र। स्वामी विवेकानन्द जी ने कहा है–'पुण्यात्मा पर सुख और दुःख शीघ्रातीशीघ्र आते हैं' परमात्मा तो अपने आनन्द को देने के लिए तैयार रहता है, बस वह चाहता है कि आप उसके योग्य हो जाएं। योग्य होने के लिए सुख और दुःख में सम रहें एवं यह मेरा नहीं है ऐसा मानकर चलें।

श्री मिहिरराज जी अरब में श्री देवचन्द्र जी के लिए विरह करते हैं, विरह एक आत्मिक अनूभूति है और शारीरिक दुःख। सुख और दुःख मनुष्य के जीवन में संघर्ष हैं। मनुष्य आत्महत्या करता है या फिर जीवन के प्रति संघर्ष।

जीवन के संघर्ष से सभी अवगुण नष्ट होते हैं। यह मानकर जीवन व्यतीत करें कि यह जीवन मेरा नहीं बल्कि पूर्णब्रह्म परमात्मा का दिया है। यह धन मेरा नहीं है। सब कुछ परमात्मा ने हमें दिया है। ऐसा मानें तो यही योग है। इसको आप एक दृष्टान्त से समझें–

एक राजा था, वह परिश्रम से राज्य का पालन करता था। उसने प्रजा के हित के लिए अकेले प्रयत्न किए, लेकिन फिर भी परेशानियां आती रहीं, इससे राजा बहुत

निराश हुआ, अन्त में वह अपने गुरु के पास गया और अपनी परेशानी बतायी। राजा की परेशानियों को सुनकर गुरु ने कहा–ऐसा है तो राज्य का त्याग कर दो। राजा ने कहा–राज्य के परित्याग से परेशानी नहीं छूटेगी। राजा की बात सुनकर गुरु ने कहा– तब तुम अपने पुत्र को राज्य दे दो। राजा ने कहा– वह तो अभी बालक है। अंत में गुरु ने समस्या का निवारण का उपाय सोचकर कहा– ऐसी समस्या है तो अपना राज्य तुम मुझे दे दो। राजा प्रसन्न होकर कहता है– अवश्य, इसे आप ही ले लो। तब गुरु ने कहा– अब तुम कहां जाओगे?राजा ने कहा कुछ धन लेकर कहीं व्यापार करुँगा।

गुरु ने कहा–वह राज्य तो आपने मुझे दे दिया है। राजा ने कहा–क्षमा करें अब मैं अपने दिये हुए राज्य में न जाकर अन्यत्र जाऊँगा। गुरु ने कहा– मेरे पास एक विशाल राज्य है परन्तु एक समस्या है कि मैं सन्यासी हूँ, जिसके कारण राज्य चलाने में असमर्थ हूँ, मुझे एक सहायक की आवश्यकता है क्या तुम मेरी सहायता करोगे। राजा ने कहा– अवश्य करुँगा।

गुरु ने कहा– अब तुम मेरे सहायक हो मैं चाहता हूँ कि तुम राज्य करो, लेकिन वहां आपका कुछ नहीं है न लाभ न हानि, कष्ट, सुख, कुछ नहीं। सब कुछ मेरे हैं। राजा दुबारा राज्य करने लगा दो महिने व्यतीत होने के बाद एक दिन गुरु राज्य में आये और राजा से पूछा–राज्य व्यवस्था कैसी है और जीवन कष्टमयी है या नहीं ?

राजा ने कहा– मैं तो आपका सेवक हूँ, श्रद्धा और परिश्रम से दिन–रात कार्य करता हूँ। इसलिए चिन्ता किसकी ?

गुरु बोले –हे राजन्! यही योग है। 'इदं न मम' ऐसे भाव से कार्य करो, उसीमें सभी कष्टों से मुक्त हो सकते हो। आपके लिए यह एक महत्वपूर्ण संदेश है 'इदं न मम' इसे जीवन में आचरित कीजिए।

बृजेश निजानन्दी
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

श्री बीतक साहेब, प्रश्न पत्र (मॉडल पेपर) २०१६

नोट – श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा की तरफ से गांव तथा शहरों में प्रचारक तैयार करने हेतु बीतक साहेब की परीक्षा के लिये ये मॉडल पेपर प्रकाशित किया जा रहा है। यह परीक्षा सन् 2016 के वार्षिकोत्सव पर ली जाएगी इच्छुक सुन्दरसाथ इसकी पूर्ण तैयारी करके आवें।

बीतक प्रश्न (मॉडल पेपर)

समय 3 घण्टे **पूर्णांक 100**

क. नीचे दिये गये प्रश्नों में से पांच प्रश्नों का संक्षिप्त में उत्तर दीजिए 10

1. अथ् तीनों स्वरूपों की बीतक और बसरी, मलकी एवं हकी तीन स्वरूपों में क्या अन्तर है स्पष्ट कीजिए।

2.. औरंगजेब के समय में बुद्ध कल्कि अवतार का प्रकटन होगा इसका प्रमाण किस ग्रन्थ में लिखा है?

3. एक सौ बीस (120) बरस की लीला का खुलासा कीजिए।

4. क्या गुनाह है इनका, और जो बाइयाँ दोए।
काढ़ी इन्हें कौन गुनाह से, साथ से बाहिर सोए।।
यह कहाँ का प्रसंग है और किसका कथन है?

5. षट् दर्शन के आचार्यों (रचयिताओं) का नाम लिखिए–

6. औरंगजेब के पांच दरबारियों के नाम बताइये।

7. माया के चार हथियार क्या–क्या हैं ?

8. कुरान में श्री देवचन्द्र जी, श्री प्राणनाथ जी, साकुण्डल और साकुमार को किस नाम से सम्बोधित किया गया है ?

ख. कोई भी पांच चौपाईयों का अर्थ लिखिए– 20

1. ताके तीन तकरार कहे, सो भये तीनो इण्ड।

ताकी बीतक जुदी जुदी, माया मिथ्या नट ब्रह्मांड।।
2. श्री पारब्रह्म लीला रस का, यह जो ग्रन्थ श्री भागवत।।
तिनको सुन के स्वर्ग का, ए सब साधन करत।।
3. साल नव सौ नब्बे मास नव, हुए रसूल को जब।
रूह अल्ला मिसल गाजियों, मोमिन उतरे तब।।
4. तीज भई रात घड़ी चौद लों, उपरान्त चौथ भई जब।
दोय घड़ी रात बाकी रही, समय अन्तर्ध्यान को तब।।
5. कहो चतुर्भुज का, दिखाऊं, तुम्हें दरसन।
के कहो ज्योति स्वरूप को, के सेससांई सहस्त्र फन।।
6. साका सालवहन का, सोरह सौ पूरन।
बैठा साका विजयाभिनन्द का, तब जाहिर हुई खबर।।
7. दस तन को लेए के, किए दो तन बराबर।
संझा के समय मिने, तब जाहिर हुई खबर।।
8. हुकम के अमल में, न कोई उतरे मोमिन।
हकीकत मारफत की, किन आगे करें रोसन।।

ग. पांच चौपाईयों का सप्रसंग भावार्थ लिखिये 20
1. इतथें आया इसक, बैठे तिन तखत।
पहुंचे अरस अजीम में, तहां देखी हक सूरत।।
2. और एकादसी को लेत प्रसाद, ताको भेद इतना जानत।
कोट एकादसी एक सीत के, तुल्य न आवत।।
3. कोई न अघाया इनमें, चचोड़त ठौर मुरदार।
श्री धाम धनी सुख छोड़के, क्या हमेसा होओगे ख्वार।।
4. पांच तत्व तीन गुन, और मूल प्रकृत।
इनको नास तुम कहयो, यह ठौर अक्षर की कित।।
5. साखी– कहया कौड़ी ते हीरा भया, हीरा ते भया लाल।
आधा भक्त कबीर है, पुरा भक्त कमाल।।
6. अठोत्तर सौ पख साखा सही, साला है गौलोक।
सतगुरू चरणों को छेत्र है, जहां जाए सब सोक।।
7. तब जवाब मोमिनों दिया, हमारी नमाज कजा न होए।
जो मतलब दुनिया वास्ते, काम किया होए सोए।

8. इन सरूप की इन जुबां, कही न जाए सिफत।
सब्दातीत के पार की, सो कहनी जुबां हद इत।।

घ. रिक्त स्थानों को भरिये 10

1. एह खेल देखन की, ...।
....., ...।।
2. सतजुग के बीज भूत, ...।
....., ...।।
3. ए भेष सिपाही का,.....।
.....,.....।।
4. वय किसोर अति सुन्दर, ...।
.....,.....।।
5. तीन गुन ते चौथो गुन नहीं, ...।
.....,.....।।

ङ. नीचे दी गयीं पक्तियों का मिलान कीजिए 5

1. छठी मन्या	मीमांसा दरसनी
2. सातमी मन्या–	वेदान्ती
3. जीव ईश्वर ब्रह्म कर्म रूप है–	आत्मा
4. प्रकृत पुरूष मिलने से जगत् प्रकट होता है–	जंबूद्वीप
5. कण–कण में ब्रह्म व्यापक है–	सांख्य मतावलम्बी

च सही उत्तर का चुनाव कीजिए 5

1. हम किस ग्रन्थ को शास्त्र मानकर श्रवण करते है?
क. बीतक ख. भागवत पुराण ग. तारतम वाणी घ. 25 पक्ष का वर्णन
2. भैरों ठक्कर को श्री जी चर्चा का प्रभाव न होने का मूल कारण क्या था?
क. हृदय में ज्ञान का प्रकाश न होना,
ख. अशुद्ध भोजन, आचरण में अपवित्रता
ग. श्री जी के स्वरूप की पहचान न होना,
घ. परिवार के दबाव के कारण।
3. आकिल खान पूरे इस्लाम समुदाय का था।

क. न्यायाधीश
ख. मुख्य दरबारी
ग. धर्मगुरू
घ. प्रमुख
4. खिमाई भाई कहां के रहने वाले थे?
क. दिल्ली
ख. गुजरात
ग. राजस्थान
घ. मध्य प्रदेश
5. श्री जी को अंगीठी तपाने की सेवा कौन करते थे?
क. बिहारी दास
ख. लालदास जी
ग. तेजकुंवरी जी (बाईजूराज जी)
घ. शंकर हजूरी

छ. नीचे दी गयी पक्तियों का पूर्ण उल्लेख कीजिए 20
1. श्री जी ने उदयपुर में धारण किए फकीरी भेष
2. कयामत के सात निशान
3. वैष्णव सम्प्रदाय के चार मत, दस नाम (सन्यासियों के), और सात मन्यायें
4. 12 मोमिन कहां–कहां के रहने वाले थे स्थान सहित उनके अलग–अलग नाम बतायें।
5. अष्ट प्रहर की सेवा में वर्णित युगल स्वरूप के सिनगार का वर्णन कीजिए।

ज. श्लोक, चौपाइयां तथा पद्य लिखिए– 10
1. देवापि और मरू पूर्वजन्म के योगी थे वे दोनों कलियुग में प्रकट होंगे। इस प्रसंग को दर्शाने के लिए दो श्लोक लिखिए।

अथवा

सतगुरू कौन है?इस प्रसंग को दर्शाने के लिए दो श्लोक लिखिए।
2. मूल बीतक में श्री जी के लिये 'अक्षरातीत' शब्द प्रयोग किया है। इस सम्बन्ध की दो चौपाईयां लिखिये।
3. श्री जी ने चिन्तामणि के समक्ष कबीर जी के जिस पद्य पर चर्चा की, उनमें से कोई भी दो पंक्तियां लिखिए।

इति

स्मारिका २०१६ के सम्बन्ध में सुन्दरसाथ से अनुरोध

धाम धनी के लाडले, प्यारे सुन्दरसाथ जी! आप सब को सूचित करते हुए हर्ष हो रहा है किं इस वर्ष श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा का दशाब्दि महोत्सव

(दसवां वार्षिकोत्सव) 2 नवम्बर से 6 नवम्बर को मनाया जायेगा। इस अवसर पर एक तारतम मंजरी की विशेष स्मारिका बनाई जाएगी।

अतः आप सब से अनुरोध है कि इस स्मारिका के लिए अपने विशेष लेख भेजें, जिसमें श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ की 10 वर्षों की उन्नति–प्रगति, यहाँ के शिक्षण कार्य, जागनी प्रचार, ध्यान कक्ष, पुस्तकालय, स्टुडियो, मन्दिर के बारे में तथा आपको यहाँ के जो भी अच्छे अनुभव हुए हों उन सब का वर्णन करते हुए लेख (उस पर स्मारिका के लिए विशेष लेख) लिख कर भिजवाने की कृपा करें। ध्यान रहे कि लेख न अधिक लम्बा न अधिक छोटा ही हो।

स्मारिका में कोई भी व्यक्ति अपने व्यापारिक प्रतिष्ठान का विज्ञापन छपवाने तथा परिवार की तरफ से शुभ कामनाएँ देने हेतु विज्ञापन बना कर भेज सकता है। विज्ञापन प्रकाशित करने की दरें इस प्रकार से हैं–

(1) पूरा पृष्ठ = 3000 रू, (2)आधा पृष्ठ 1500 रू,
(3) चौपाई पृष्ठ = 850 रू, (4) बैक कवर = 15000 रू,
(5) बैक फ्रन्ट कवर (इनसाइड़) = 8000 रू,

विशेष–
(1) विज्ञापन के साथ, विज्ञापन राशि (चैकद्वारा) अवश्य भेजे।
(2) विज्ञापन हेतु अधिक जानकारी के लिए अवश्य सम्पर्क करें।

अरूण मिढ्डा मो0 न0 – 9212324175

दशवां वार्षिकोत्सव

प्राणाधार सुन्दरसाथ जी!
सप्रेम प्रणाम!

आपको हर्ष के साथ सूचित किया जाता है कि अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी की छत्रछाया एवं परमहंस महाराज श्री रामरतनदास जी की कृपा व धर्मवीर जागनी रत्न सरकार श्री जगदीश चन्द्र जी की प्रेरणा से श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा का **दशवां वार्षिकोत्सव 02/11/2016 से 06/11/2016 तक** होना निश्चित किया गया है।

अतः आप सभी से विनम्र अनुरोध है कि सभी सुन्दरसाथ एवं धर्मप्रेमी सज्जन समयानुसार पधारकर ब्रह्मवाणी के अमृतरस का पान करें।

आपके आगमन की प्रतीक्षा में
श्री राजन स्वामी जी एवं ज्ञानपीठ परिवार

निवेदक
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रष्ट सरसावा
जिला–सहारनपुर (उ. प्र.)
मो. न. 8650851010, 9412016322

श्री बीतक चर्चा 2016

प्राणाधार सुन्दरसाथ जी हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा में **बीतक चर्चा का आयोजन दिनांक 24.7.2016** से किया जायेगा।

अतः आप सभी सुन्दरसाथ से अनुरोध है कि ज्ञानपीठ सरसावा में पधारकर बीतक चर्चा का लाभ लें।

अति आवश्यक सूचना

आत्म सम्बन्धी प्यारे सुन्दरसाथ जी, प्रत्येक वर्ष की भांति इस वर्ष भी 2 नवम्बर 2016 से 6 नवम्बर 2016 तक श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा का वार्षिकोत्व बड़ी धूम धाम से मनाया जायेगा।

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा के स्थापना के दश वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में 'स्मारिका' प्रकाशित होने जा रही है। अतः आप सभी धर्मप्रिय सुन्दरसाथ से विनम्र अनुरोध है कि स्मारिका के लिए स्वच्छ एवं सुन्दर लिखावट में लेख शीघ्र अति शीघ्र हमें भेजें।

प्रणाम जी

निवेदक
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, ट्रष्ट

सुन्दरसाथ से अनुरोध

धाम धनी के लाडले सुन्दरसाथ जी! आप सभी को यह विदित होगा कि हमारी 'तारतम मंजरी मासिका पत्रिका के प्रकाशन का उद्देश्य जन–जन के हृदय में सत्य ज्ञान का प्रकाश एवं श्री प्राणनाथ जी के वाणी को प्रचारित करना है।

अतः इस पुनीत कार्य में आपकी सहायता अपेक्षित है, तारतम मंजरी पत्रिका में लेखों की कमी है, यदि आपके के अन्दर किसी भी प्रकार के सद्विचार उत्पन्न होते हैं तो अपनी लेखनी के द्वारा उन विचारों को लेखों में परिवर्तित कीजिए और अपने सद्विचारों को इस पत्रिका के माध्यम से जन–जन तक पहुंचाइए।

विनम्र निवेदन

धाम धनी के लाडले सुन्दरसाथ जी! वर्तमान समय में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा में शिक्षण, साहित्यिक एवं निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है। जिन सुन्दरसाथ ने इन कार्यों के लिए अपनी सेवाएं लिखवायी है या स्वतः उनके मन में सेवा करने की इच्छा है, कृपया वे इन खातों में धनराशि भेजने का कष्ट करें। इस बात का ध्यान रखा जाय कि जिस सेवा की धनराशि भेजी जा रही है, मात्र उसी खाते की C.B.S.A/C संख्या में भेजें।

प्रणाम जी

सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया

1. खाता धारक का नाम–श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रष्ट
   खाता संख्या–3290805513
2. खाता धारक का नाम–श्री ज्ञानपीठ प्रकाशन
   खाता संख्या– 3290804553

पता–शाखा–सरसावा, सहारनपुर उ. प्र.
247232
MICR-Code" 247016005
IFSC CODE-CBIN0282531

सामान्य खाता संख्या
१३३५०००१००१११६१६
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

साहित्य खाता संख्या
१३३५०००१००११८७५१
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

भवन निमार्ण खाता संख्या
३४६७११८८७६७
भारतीय स्टैट बैंक
(११४३६) सरसावा, सहारनपुर
उत्तरप्रदेश, पिन- २४७२३२
IFS CODE- SBIN0011439

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा से प्रकाशित साहित्यों की सूची

क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य
1.	किरंतन टीका	300.00
2.	खिलवत टीका	150.00
3.	सागर टीका	170.00
4.	श्रृंगार टीका	300.00
5.	सिन्धी टीका	150.00
6.	परिक्रमा टीका	275.00
7.	परिक्रमा टीका (अंग्रजी)	350.00
8.	विद्वत्दमनी	200.00
9.	धाम सुषमा	60.00
10.	पटदर्शन	200.00
11.	दोपहर का सूरज (हिन्दी)	60.00
12.	दोपहर का सूरज (अंग्रेजी)	80.00
13.	प्रेम का चाँद	65.00
14.	बोध मंजरी (हिन्दी)	15.00
15.	बोध मंजरी (अंग्रेजी)	15.00
16.	बोध मंजरी (नेपाली)	30.00
17.	ज्ञान मंजूषा	20.00
18.	हमारी रहनी	50.00
19.	अमृत बिन्दु	10.00
20.	सत्यांजलि	40.00
21.	बाल युवा संस्कार	10.00
22.	संस्कार पद्धति	15.00
23.	निजानन्द चित्रकथा	30.00
24.	चितवनी	05.00
25.	चितवनी नक्शा	30.00
26.	नित्य पाठ (चौपाई)	15.00
27.	नित्य पाठ (बीतक)	05.00
28.	मेहर सागर	10.00
29.	श्रृंगार के मोती	15.00
30.	सागर के मोती	10.00
31.	अनमोल मोती	05.00
32.	स्वास्थ्य के प्रहरी	30.00
33.	अनमोल मोती तफसीरे हुसैनी	50.00
34.	जामिल–ए–मारिफल	30.00
35.	फरमान	30.00
36.	बुलंद मुकदमा बड़ा मसौदा	40.00
37.	शब–ए–मेअराज	15.00
38.	शेख जी मीर जी का बयान	20.00
39.	Supreme Truth God	20.00
40.	सी. डी., डी. वी. डी. तथा एम. पी थ्री. (गायन एवं चर्चा)	
41.	जागो और जगाओ	100.00
42.	निजानन्द योग	60.00
43.	ब्रह्मवाणी चर्चा	40.00
44.	सेवा पूजा	30.00
45.	मुख्तार–ए–हिंद	20.00
46.	Nijanand School	120.00
47.	श्री मुखवाणी संगीत (राग सहित)	150.00
48.	प्रश्नमाला	05.00
49.	प्राणनाथ महिमा (हिन्दी)	20.00
50.	प्राणनाथ महिमा (गुजराती)	20.00
51.	बोध मंजरी (गुजराती)	15.00
52.	सिनगार (गुजराती)	300.00
53.	सागर (गुजराती)	170.00
54.	चितवनी (गुजराती)	05.00
55.	कैलेंडर	10.00
56.	स्टीकर (प्रणाम जी)	30.00
57.	बड़ा स्टीकर (प्रणाम जी)	125.00
58.	बोध मंजरी (उड़ीया)	15.00
59.	श्री मुखवाणी संगीत	60.00